eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 6, Issue 01, Jan 2023

लोकलुभावनवाद का लोकतांत्रिक संस्थाओं पर प्रभाव– एक समीक्षात्मक अध्ययन

[1]डा0 आभा चौबे
[1]प्राचार्य, सुखनन्दन कालेज, मुन्गेली, छत्तीसगढ

Received: 20 Jan 2023, Accepted: 28 Jan 2023, Published with Peer Reviewed on line: 31 Jan 2023

Abstract

लोकलुभावनवाद एक तेजी से उभरती राजनीतिक विचारधारा है, जो लोकतांत्रिक संस्थाओं को चुनौती देती है और उनके स्थायित्व पर गहरा प्रभाव डालती है। यह शोधपत्र लोकलुभावनवाद की परिभाषा, इसके प्रमुख सिद्धांतों और लोकतांत्रिक संस्थाओं पर इसके प्रभावों का विश्लेषण करता है। भारत और विश्व के विभिन्न देशों के उदाहरणों के माध्यम से यह समझने का प्रयास किया गया है कि किस प्रकार लोकलुभावनवाद चुनावी प्रक्रिया, मीडिया, और सरकारी संस्थानों को प्रभावित करता है, और इसके दीर्घकालिक परिणामों का आकलन किया गया है।

मुख्य शब्द– लोकलुभावनवाद, लोकतंत्र, चुनावी प्रक्रिया, मीडिया, लोकतांत्रिक संस्थाएँ, राजनीतिक प्रभाव

Introduction

लोकलुभावनवाद का उदय हाल के दशकों में वैश्विक और स्थानीय दोनों राजनीतिक परिदृश्यों में अत्यधिक महत्वपूर्ण हो गया है, और यह एक ऐसी विचारधारा है जो मुख्य रूप से सत्ता–विरोधी और जनहितवादी भावनाओं पर आधारित होती है। यह विचारधारा आम जनता के बीच गहरी पैठ बना लेती है क्योंकि यह उनकी वास्तविक या काल्पनिक समस्याओं और चिंताओं को स्वर देती है, जिससे एक सरल और प्रत्यक्ष समाधान का वादा किया जाता है। लोकलुभावनवादी नेता आमतौर पर खुद को जनता के असली प्रतिनिधिष्के रूप में प्रस्तुत करते हैं और यह दावा करते हैं कि वे जनहित के लिए कार्य कर रहे हैं, जबकि सत्ता में बैठे लोग, जिन्हें वे एलीट या भ्रष्ट करार देते हैं, जनता के हितों के खिलाफ काम कर रहे हैं। लोकलुभावनवादी नेता जनता और अभिजात वर्ग के बीच संघर्ष का एक विभाजनात्मक दृष्टिकोण अपनाते हैं, जहां वे सत्ता के ढांचे को चुनौती देते हैं और पारंपरिक लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं को कमजोर करने का प्रयास करते हैं। इसका प्रभाव विशेष रूप से लोकतांत्रिक संस्थाओं की स्थिरता, उनकी निष्पक्षता, और उनके कार्यों की पारदर्शिता पर पड़ता है। लोकलुभावनवादी आंदोलनों की प्रमुख विशेषता यह होती है कि वे पारंपरिक राजनीतिक ढांचे को ध्वस्त करने और उसके स्थान पर सीधे जनादेश के आधार पर शासन स्थापित करने का वादा करते हैं। वे अक्सर चुनावी प्रक्रियाओं, विधायिका, न्यायपालिका, और मीडिया जैसी संस्थाओं पर अविश्वास व्यक्त करते हैं, जो किसी भी लोकतांत्रिक व्यवस्था के लिए आधारभूत हैं।

इन संस्थाओं को वे भ्रष्ट, जनविरोधी, और सत्तावादी के रूप में चित्रित करते हैं। इसका एक प्रमुख कारण यह है कि ये संस्थाएँ लोकतंत्र के तहत संतुलन और जाँच प्रणाली का हिस्सा होती हैं, और लोकलुभावनवादी नेताओं के विचार से वे उनके एजेंडे के कार्यान्वयन में बाधा उत्पन्न करती

हैं। मीडिया के संदर्भ में, लोकलुभावनवादी नेता अक्सर इसे सत्ता के समर्थक या फेक न्यूजष्का प्रसार करने वाला करार देते हैं, और इस प्रकार वे स्वतंत्र और निष्पक्ष पत्रकारिता पर हमले करते हैं, जो लोकतांत्रिक समाजों में पारदर्शिता और सूचना के प्रवाह का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। लोकलुभावनवाद की एक अन्य विशेषता यह है कि यह चुनावी प्रक्रियाओं को भी गहराई से प्रभावित करता है। चुनावी अभियानों में लोकलुभावनवादी नेताओं द्वारा विभाजनकारी भाषा और नारों का प्रयोग किया जाता है, जो मतदाताओं को भावनात्मक रूप से प्रभावित करता है और अक्सर तर्कसंगत बहस या संवाद की जगह ले लेता है। इसके परिणामस्वरूप चुनावी प्रक्रिया में ध्रुवीकरण बढ़ जाता है, जहां जनता की अपेक्षाओं और आशाओं को सरल समाधानों और तत्काल परिणामों के वादों के आधार पर निर्देशित किया जाता है। लेकिन वास्तविकता में, यह प्रक्रिया लोकतांत्रिक संस्थाओं की जटिलता और उनके दीर्घकालिक कार्यों को कम करके आँकती है। चुनावी अभियानों में लोकलुभावनवाद का प्रभाव न केवल राजनीतिक ध्रुवीकरण को बढ़ावा देता है, बल्कि राजनीतिक प्रक्रियाओं की स्थिरता और विश्वसनीयता पर भी सवाल खड़े करता है। लोकलुभावनवाद की यह प्रवृत्ति, जहाँ नेता खुद को जनता के हितों का एकमात्र प्रतिनिधि बताते हैं, लोकतांत्रिक संस्थाओं के प्रति अविश्वास को बढ़ावा देती है। यह जनसाधारण और राजनीतिक अभिजात वर्ग के बीच गहरे विभाजन का कारण बनती है, जो समय के साथ सामाजिक अस्थिरता को जन्म देती है। लोकलुभावनवादी नेता अक्सर अपने समर्थकों को यह विश्वास दिलाते हैं कि केवल वे ही जनता के सच्चे प्रतिनिधि हैं, और बाकी सभी संस्थाएँ उनके विरोध में खड़ी हैं। इससे संस्थानों की स्वायत्तता और निष्पक्षता पर गहरा प्रभाव पड़ता है, क्योंकि इन संस्थाओं पर जनता का विश्वास धीरे–धीरे कम होता जाता है। इसके साथ ही, लोकलुभावनवादी नेता अपनी सत्ता को बरकरार रखने के लिए कई बार संवैधानिक और लोकतांत्रिक संस्थाओं को बदलने या उनके कार्यों को सीमित करने का प्रयास करते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि लोकतांत्रिक संस्थाएँ, जो किसी भी लोकतांत्रिक समाज की रीढ़ होती हैं, कमजोर हो जाती हैं और उनकी स्वतंत्रता पर सवाल खड़े होते हैं।

लोकलुभावनवादी आंदोलनों का एक और प्रमुख प्रभाव यह होता है कि ये जनता को तात्कालिक और सरल समाधानों का लालच देते हैं, लेकिन इन समाधानों की दीर्घकालिक प्रभावशीलता संदिग्ध होती है। उदाहरण के लिए, लोकलुभावनवादी नीतियों का प्रमुख उद्देश्य अक्सर अल्पकालिक चुनावी सफलता प्राप्त करना होता है, जिसके लिए दीर्घकालिक शासन की स्थिरता और न्याय प्रणाली के प्रति सम्मान की बलि दी जाती है। यह प्रवृत्ति लोकतांत्रिक संस्थाओं की दीर्घकालिक स्थिरता को नुकसान पहुँचाती है और समाज में एक प्रकार की अनिश्चितता का वातावरण बनाती है। इसके परिणामस्वरूप, लोकतांत्रिक प्रक्रिया को कमजोर करने वाली नीतियों का समर्थन बढ़ जाता है, जो अंततः लोकतंत्र के मूलभूत सिद्धांतों को कमजोर कर सकती है।

अंततः, लोकलुभावनवाद का उदय और उसका प्रभाव लोकतांत्रिक संस्थाओं की स्वतंत्रता और निष्पक्षता के लिए एक गंभीर चुनौती प्रस्तुत करता है। यह चुनौती न केवल राजनीतिक संस्थाओं तक सीमित रहती है, बल्कि समाज के विभिन्न स्तरों पर भी इसका असर दिखाई देता है। यदि लोकलुभावनवादी आंदोलनों का सही ढंग से सामना नहीं किया गया, तो यह लोकतांत्रिक प्रणाली

के संतुलन और स्थिरता को दीर्घकाल में गहरे संकट में डाल सकता है। इस परिदृश्य में, यह आवश्यक हो जाता है कि लोकतांत्रिक संस्थाएँ मजबूत हों और जनता के विश्वास को पुनः स्थापित करने के लिए पारदर्शिता और उत्तरदायित्व पर अधिक जोर दिया जाए।

2. लोकलुभावनवाद की परिभाषा और प्रमुख सिद्धांत

लोकलुभावनवाद एक जटिल और व्यापक राजनीतिक विचारधारा है, जिसका मुख्य सिद्धांत समाज को दो विरोधी समूहों में विभाजित करना है, शुद्ध जनता और भ्रष्ट अभिजात वर्ग। इस विभाजन राजनीति के हर पहलू में लोकलुभावनवादी नेताओं की सोच को निर्देशित करता है। लोकलुभावनवादी नेताओं का दावा होता है कि वे अकेले ही जनता के सच्चे प्रतिनिधि हैं और शासक अभिजात वर्ग को दोषी ठहराते हैं, जो उनके अनुसार जनता के अधिकारों और हितों को नुकसान पहुंचाते हैं। इस प्रकार, लोकलुभावनवाद के सिद्धांतों का केंद्र बिंदु सत्ता–विरोधी और एलीट–विरोधी विचारधाराएं हैं। लोकलुभावनवादी नेता अक्सर पारंपरिक राजनीतिक संस्थाओं और नेताओं को अविश्वसनीय मानते हैं और जनता के हितों को पूरा करने के लिए खुद को जनता के असली प्रतिनिधि के रूप में प्रस्तुत करते हैं (Mudde-2004)।

लोकलुभावनवाद की प्रमुख विशेषताओं में से एक इसका एलीट–विरोधी दृष्टिकोण है। यह विचारधारा मानती है कि राजनीतिक, आर्थिक, और सांस्कृतिक संस्थाओं में बैठा अभिजात वर्ग भ्रष्ट है और जनता के सच्चे हितों का ध्यान नहीं रखता। लोकलुभावनवादी नेता अक्सर अपनी ताकत इस विचार से खींचते हैं कि वे शुद्ध जनता के नैतिक और सांस्कृतिक मूल्यों का प्रतिनिधित्व करते हैं और वे सत्ता में बैठे हुए लोगों के खिलाफ लड़ रहे हैं। उनका तर्क होता है कि अभिजात वर्ग अपने हितों के लिए काम करता है, जबकि जनता की जरूरतें उपेक्षित रहती हैं। इसी कारण, लोकलुभावनवाद समाज में असंतोष और विरोध की भावना को भड़काता है, खासकर जब जनता को लगता है कि राजनीतिक और सामाजिक संस्थाएं उनकी आकांक्षाओं को पूरा नहीं कर रही हैं (Laclau- 2005)।

लोकलुभावनवाद का एक और प्रमुख सिद्धांत जनता बनाम शासक वर्ग की अवधारणा है। इस विचारधारा में जनता और शासक वर्ग के बीच एक स्पष्ट विभाजन देखा जाता है। जनता को नैतिक, शुद्ध, और निस्वार्थ बताया जाता है, जबकि शासक वर्ग को भ्रष्ट, नैतिक रूप से दिवालिया, और स्वार्थी बताया जाता है। लोकलुभावनवादी नेता अक्सर इस विभाजन को अपनी राजनीति में प्रमुख स्थान देते हैं और एक ऐसा परिदृश्य प्रस्तुत करते हैं जिसमें केवल वे ही जनता के सच्चे हितों की रक्षा करने में सक्षम हैं। इसके साथ ही, लोकलुभावनवादी नेता जनता की आवाज को प्राथमिकता देते हैं और किसी भी तरह के मध्यस्थ या संस्थागत प्रक्रियाओं को दरकिनार करने का प्रयास करते हैं, क्योंकि वे उन्हें जनता और नेता के बीच बाधा मानते हैं। इस प्रकार, लोकलुभावनवादी राजनीति का मूल आधार यह है कि नेता सीधे जनता से संवाद करें और उनके सच्चे प्रतिनिधि बनें, बिना किसी मध्यस्थता या संस्थागत जटिलता के (Mudde & Rovira Kaltwasser- 2013)।

लोकलुभावनवादी नेता जनता के बीच असंतोष और हताशा का फायदा उठाते हुए सरल और सीधे समाधान पेश करने का वादा करते हैं। वे आमतौर पर जटिल समस्याओं के त्वरित और सतही

समाधान प्रस्तुत करते हैं, जो अक्सर वास्तविकता में लागू होने के लिए व्यावहारिक नहीं होते। उदाहरण के लिए, लोकलुभावनवादी नेता आर्थिक असमानता, बेरोजगारी, और आप्रवासन जैसे मुद्दों पर अत्यंत सरल और प्रभावशाली नारे देते हैं। ये नारे सीधे जनता के भावनाओं को प्रभावित करते हैं और उन्हें यह विश्वास दिलाते हैं कि समाधान आसान और तत्काल हैं, जबकि वास्तव में ये समस्याएं बहुत जटिल होती हैं और उनका समाधान दीर्घकालिक नीतियों और रणनीतियों की मांग करता है (Mény & Surel- 2002)। लोकलुभावनवादी नेता अक्सर यह दावा करते हैं कि अगर वे सत्ता में आए, तो वे इन समस्याओं को आसानी से हल कर सकते हैं, जिससे जनता में उम्मीदें बढ़ती हैं और वे राजनीतिक प्रक्रियाओं के प्रति अविश्वास की भावना से भर जाते हैं।

लोकलुभावनवाद की एक अन्य प्रमुख विशेषता मीडिया का व्यापक उपयोग है। लोकलुभावनवादी नेता मीडिया को अपने विचारों और नारों को प्रसारित करने के लिए अत्यधिक उपयोग करते हैं। वे मीडिया के माध्यम से अपने संदेशों को सीधे जनता तक पहुँचाते हैं, जिसमें वे जनता के विचारों और भावनाओं का प्रतिनिधित्व करने का दावा करते हैं। इसके साथ ही, वे पारंपरिक मीडिया संस्थानों पर भी हमला करते हैं और उन्हें फेक न्यूज या सत्ता के समर्थक करार देते हैं, ताकि जनता का ध्यान स्वतंत्र पत्रकारिता से हटाकर खुद पर केंद्रित कर सकें। इस तरह, वे मीडिया को एक उपकरण के रूप में उपयोग करते हैं, न केवल अपने राजनीतिक एजेंडे को बढ़ावा देने के लिए, बल्कि जनता के बीच एक विशेष प्रकार की मानसिकता विकसित करने के लिए भी (Canovan- 1999)।

लोकलुभावनवादी नेता सोशल मीडिया का भी बड़े पैमाने पर उपयोग करते हैं। सोशल मीडिया प्लेटफ़ॉर्म पर उनकी उपस्थिति अक्सर प्रबल होती है क्योंकि यह माध्यम उन्हें सीधे जनता से संवाद करने की अनुमति देता है, जिससे वे अपनी छवि को एक सामान्य व्यक्ति के रूप में प्रस्तुत कर सकते हैं, जो जनता के मुद्दों के प्रति संवेदनशील है। सोशल मीडिया लोकलुभावनवादी नेताओं के लिए एक शक्तिशाली उपकरण है क्योंकि यह माध्यम बिना किसी मध्यस्थता के संवाद स्थापित करने में सक्षम बनाता है, जो उनकी जनता की आवाज़ के विचारधारा के अनुरूप है (Jagers & Walgrave- 2007)। इस प्रकार, मीडिया और सोशल मीडिया के माध्यम से लोकलुभावनवादी नेता अपनी नीतियों और विचारों को जनता तक पहुँचाने में अत्यधिक सफल होते हैं, जो उन्हें तेजी से राजनीतिक समर्थन दिलाने में मदद करता है।

संक्षेप में, लोकलुभावनवाद एक ऐसी राजनीतिक विचारधारा है जो समाज को शुद्ध जनता और भ्रष्ट अभिजात वर्ग के बीच विभाजित करती है। इसका मुख्य उद्देश्य सत्ता में बैठे अभिजात वर्ग के खिलाफ जनता की आवाज को उठाना और सरल, सीधे समाधान पेश करना होता है। लोकलुभावनवादी नेता जनता के असंतोष और भावनाओं का उपयोग करते हुए मीडिया और सोशल मीडिया के माध्यम से अपनी राजनीतिक स्थिति को मजबूत करते हैं। हालाँकि, लोकलुभावनवादी विचारधारा में दीर्घकालिक स्थिरता की कमी हो सकती है क्योंकि इसके समाधान अक्सर जटिल समस्याओं के लिए व्यावहारिक नहीं होते और यह लोकतांत्रिक संस्थाओं को कमजोर कर सकता है।

3. लोकतांत्रिक संस्थाएँ और उनकी संरचना

लोकतांत्रिक संस्थाएँ किसी भी लोकतंत्र की नींव होती हैं। ये संस्थाएँ जैसे संसद, न्यायपालिका, और स्वतंत्र मीडिया, सरकार की वैधता, पारदर्शिता, और जवाबदेही सुनिश्चित करती हैं। संसद का कार्य कानून बनाना और सरकार की नीतियों की निगरानी करना होता है। यह वह मंच है जहां जनप्रतिनिधि जनता की समस्याओं और आकांक्षाओं को उठाते हैं और उन पर विचार–विमर्श करके कानून पारित करते हैं। न्यायपालिका का काम न्याय और कानून के शासन की रक्षा करना होता है। यह नागरिक अधिकारों की सुरक्षा और सरकार के निर्णयों पर संवैधानिक समीक्षा के माध्यम से संतुलन और नियंत्रण प्रदान करती है। इसके अलावा, स्वतंत्र मीडिया लोकतंत्र में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, क्योंकि यह सरकार और नागरिकों के बीच संचार का माध्यम है। मीडिया सूचना के प्रवाह को नियंत्रित करने के साथ–साथ नागरिकों को जागरूक और शिक्षित करने में महत्वपूर्ण योगदान देता है (Dahl- 1989)।

लोकतंत्र का आधार इन संस्थाओं की स्वतंत्रता, निष्पक्षता, और पारदर्शिता पर टिका होता है। लेकिन लोकलुभावनवाद के उदय के साथ, इन संस्थाओं को अक्सर कमजोर या दुर्बल करने के प्रयास किए जाते हैं। लोकलुभावनवादी नेता इन संस्थाओं को भ्रष्टाचार और सत्ता का केंद्र मानते हैं और इन्हें जनविरोधी के रूप में चित्रित करते हैं। वे यह दावा करते हैं कि ये संस्थाएँ जनता की असली इच्छाओं का प्रतिनिधित्व नहीं करती हैं, बल्कि एक अभिजात वर्ग के हितों को पूरा करती हैं। लोकलुभावनवादी विचारधारा में, संसद को अक्सर लंबी और जटिल प्रक्रियाओं का एक अवरोधक माना जाता है, जबकि न्यायपालिका और मीडिया को जनविरोधी और भ्रष्ट संस्थाएँ कहा जाता है (Mudde- 2004)।

लोकलुभावनवादी नेता जनता के समर्थन से इन संस्थाओं के अधिकारों को सीमित करने या उन्हें कमजोर करने का प्रयास करते हैं। संसद के संदर्भ में, वे इसे अप्रासंगिक और धीमी संस्था के रूप में चित्रित करते हैं जो जनता की वास्तविक जरूरतों और समस्याओं को हल करने में विफल रहती है। इसके साथ ही, वे न्यायपालिका की स्वतंत्रता पर भी सवाल उठाते हैं और उसके निर्णयों को जनमत के विरुद्ध बताते हैं। उदाहरण के लिए, कुछ लोकलुभावनवादी नेता यह दावा करते हैं कि न्यायपालिका अभिजात वर्ग के हितों का समर्थन करती है और जनता के हितों के खिलाफ कार्य करती है। इससे न्यायपालिका की स्वायत्तता और वैधता पर संकट उत्पन्न होता है (Schedler- 1999)।

स्वतंत्र मीडिया को लोकलुभावनवादी नेता अपने सबसे बड़े दुश्मन के रूप में देखते हैं। वे मीडिया की आलोचना करते हुए इसे सत्ता का पक्षधर या फेक न्यूज का प्रचारक करार देते हैं। मीडिया की भूमिका को कमजोर करने के प्रयास में, लोकलुभावनवादी नेता जनता को यह विश्वास दिलाने का प्रयास करते हैं कि केवल वे ही सच्ची और निष्पक्ष जानकारी प्रदान कर सकते हैं। इस प्रकार, मीडिया की स्वतंत्रता पर हमले किए जाते हैं, और उसे जनता के खिलाफ खड़ा किया जाता है। इसके परिणामस्वरूप, मीडिया की विश्वसनीयता कमजोर होती है और लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं में पारदर्शिता कम हो जाती है (Levitsky & Ziblatt]-2018)।

लोकलुभावनवाद के तहत, लोकतांत्रिक संस्थाओं का क्षरण लोकतंत्र की दीर्घकालिक स्थिरता के लिए गंभीर खतरा प्रस्तुत करता है। जब संसद, न्यायपालिका, और मीडिया जैसी संस्थाओं की

स्वायत्तता और वैधता को कमजोर किया जाता है, तो शासन की पारदर्शिता और जवाबदेही समाप्त हो जाती है। इसके परिणामस्वरूप, सत्ता की केंद्रीकरण प्रवृत्ति बढ़ती है और लोकतांत्रिक संतुलन और नियंत्रण की प्रणाली नष्ट हो जाती है। इस प्रकार, लोकतांत्रिक संस्थाओं की रक्षा करना और उनकी स्वतंत्रता बनाए रखना किसी भी लोकतंत्र की दीर्घकालिक स्थिरता और सफलता के लिए आवश्यक है (वीस, 1989)।

4. लोकलुभावनवाद का लोकतांत्रिक संस्थाओं पर प्रभाव

लोकलुभावनवादी नेताओं का प्रभाव लोकतांत्रिक संस्थाओं पर गहरा और व्यापक होता है। वे सत्ता में आने या सत्ता को मजबूत करने के लिए अक्सर संवैधानिक और लोकतांत्रिक संस्थाओं की स्वतंत्रता को कमजोर करने का प्रयास करते हैं। लोकलुभावनवाद का लोकतांत्रिक संस्थाओं पर प्रभाव तीन मुख्य रूपों में देखा जा सकता हैरू संवैधानिक संस्थाओं की स्वतंत्रता में कमी, मीडिया पर नियंत्रण, और चुनावी प्रक्रियाओं में हस्तक्षेप।

संवैधानिक संस्थाओं की स्वतंत्रता में कमी–

लोकलुभावनवादी नेता अक्सर न्यायपालिका, चुनाव आयोग, और अन्य स्वतंत्र संस्थानों को कमजोर करने का प्रयास करते हैं। न्यायपालिका की स्वतंत्रता लोकतंत्र के लिए अत्यंत आवश्यक है क्योंकि यह सत्ता में बैठे लोगों को कानून के तहत जवाबदेह ठहराती है। लेकिन लोकलुभावनवादी नेता न्यायपालिका को एक अवरोधक के रूप में देखते हैं जो उनकी नीतियों और योजनाओं को लागू करने में बाधा डालती है। न्यायपालिका के खिलाफ लोकलुभावनवादी हमलों का उद्देश्य उसे नियंत्रित करना और उसकी स्वतंत्रता को समाप्त करना होता है, ताकि वह सत्ता में बैठे लोगों के अनुकूल निर्णय ले सके। इसके अलावा, चुनाव आयोग, जो स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव कराने के लिए जिम्मेदार होता है, भी लोकलुभावनवादी नेताओं के निशाने पर होता है। वे चुनाव आयोग की शक्तियों को सीमित करने का प्रयास करते हैं ताकि चुनावी प्रक्रियाओं में हेरफेर किया जा सके और सत्ता को बनाए रखा जा सके (Schedler- 1999)।

मीडिया की भूमिका–

मीडिया लोकतंत्र में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है क्योंकि यह जनता को सूचित करता है और सत्ता में बैठे लोगों की गतिविधियों पर नजर रखता है। लेकिन लोकलुभावनवादी नेता मीडिया पर नियंत्रण करने के प्रयास करते हैं। वे मीडिया को या तो अपने प्रचार के माध्यम के रूप में उपयोग करते हैं या उसे सत्ताधारी अभिजात वर्ग का समर्थक करार देकर निशाना बनाते हैं। मीडिया पर हमले के जरिए लोकलुभावनवादी नेता जनता का ध्यान स्वतंत्र पत्रकारिता से हटाकर खुद पर केंद्रित करने का प्रयास करते हैं। स्वतंत्र मीडिया की स्वतंत्रता पर हमला करने का उद्देश्य यह होता है कि जनता को एकतरफा सूचना मिले और लोकलुभावनवादी नेताओं के संदेशों का व्यापक प्रसार हो सके। उदाहरण के लिए, कई लोकलुभावनवादी सरकारों ने स्वतंत्र मीडिया को कमजोर करने के लिए इसे नियंत्रित करने या इसे फेक न्यूज का स्रोत बताने का प्रयास किया है। इससे मीडिया की स्वतंत्रता और उसकी पारदर्शिता पर संकट उत्पन्न होता है (Canovan- 1999)।

eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 6, Issue 01, Jan 2023

चुनावी प्रक्रिया पर असर–

लोकलुभावनवादी नेता चुनावी प्रक्रियाओं पर भी गहरा प्रभाव डालते हैं। वे अक्सर चुनावी अभियानों के दौरान ध्रुवीकरण और विभाजनकारी नीतियों का उपयोग करते हैं ताकि चुनाव परिणामों को अपने पक्ष में किया जा सके। लोकलुभावनवादी चुनाव अभियान आमतौर पर भावनात्मक नारों और सरल समाधान पेश करते हैं, जिससे मतदाता विभाजित हो जाते हैं। इसके अलावा, लोकलुभावनवादी नेता चुनावी संस्थानों में हस्तक्षेप करने का भी प्रयास करते हैं। वे चुनावी नियमों में बदलाव करके या चुनाव आयोग जैसी संस्थाओं को कमजोर करके चुनावी प्रक्रियाओं में हेरफेर करते हैं। इसका उद्देश्य यह होता है कि वे अपनी सत्ता को बरकरार रख सकें और लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं को अपने अनुकूल बना सकें। इस प्रकार, लोकलुभावनवाद के प्रभाव से चुनावी प्रक्रिया की निष्पक्षता और विश्वसनीयता पर प्रश्नचिह्न लग जाता है (Mudde- 2004)।

लोकलुभावनवादी आंदोलनों का यह प्रभाव लोकतंत्र की स्थिरता और उसकी संस्थाओं की स्वतंत्रता को खतरे में डालता है। जब न्यायपालिका, मीडिया, और चुनाव आयोग जैसी संस्थाएँ कमजोर होती हैं, तो लोकतांत्रिक संतुलन टूट जाता है और सत्ता का केंद्रीकरण बढ़ता है। इस प्रक्रिया से लोकतंत्र के मूल सिद्धांत कमजोर हो जाते हैं और समाज में विभाजन और ध्रुवीकरण की स्थिति उत्पन्न होती है। इसलिए, यह आवश्यक है कि लोकतांत्रिक संस्थाएँ मजबूत बनी रहें और उनकी स्वतंत्रता और निष्पक्षता को सुनिश्चित किया जाए (Mény & Surel- 2002)।

5. विश्व स्तर पर लोकलुभावनवाद के उदाहरण (Case Studies of Populism Worldwide)

लोकलुभावनवाद का प्रभाव केवल किसी एक क्षेत्र या देश तक सीमित नहीं है, बल्कि यह एक वैश्विक परिघटना है। विभिन्न देशों में यह विचारधारा विभिन्न तरीकों से उभरी और विकसित हुई है, और इसका लोकतांत्रिक संस्थाओं पर गहरा प्रभाव पड़ा है। अमेरिका, ब्राजील, और भारत जैसे देशों में लोकलुभावनवादी नेताओं ने राजनीति में महत्वपूर्ण बदलाव किए हैं। इन नेताओं ने पारंपरिक राजनीतिक संस्थाओं और अभिजात वर्ग को चुनौती दी और अपने समर्थकों के बीच असंतोष और विभाजन की भावना का लाभ उठाया। इन उदाहरणों के माध्यम से हम यह देख सकते हैं कि कैसे लोकलुभावनवादी विचारधारा विभिन्न देशों में लोकतांत्रिक संस्थाओं और प्रक्रियाओं को प्रभावित करती है।

अमेरिका में लोकलुभावनवाद का उदाहरण

अमेरिका में लोकलुभावनवाद का एक प्रमुख उदाहरण 1990 के दशक और 2000 के दशक की शुरुआत में देखा गया, जब विभिन्न लोकलुभावनवादी नेताओं ने अमेरिकी राजनीति में अपना प्रभाव जमाना शुरू किया। हालाँकि, 2008 के वित्तीय संकट के बाद लोकलुभावनवाद ने एक नई शक्ति प्राप्त की, जो विशेष रूप से आर्थिक संकट, बेरोजगारी, और आप्रवासन के मुद्दों से जुड़ी हुई थी। अमेरिकी समाज में ध्रुवीकरण बढ़ने लगा, और इसमें डोनाल्ड ट्रम्प का नेतृत्व महत्वपूर्ण हो गया। ट्रम्प ने 2016 से पहले बिरथरिज्म और वैश्वीकरण के खिलाफ अपने विचारों को विकसित किया।

उन्होंने अमेरिका फर्स्ट जैसे नारों को आगे बढ़ाया और पारंपरिक राजनीतिक संस्थानों की आलोचना की।

ट्रम्प का राजनीतिक अभियान एक विशिष्ट लोकलुभावनवादी शैली का उदाहरण था, जिसमें उन्होंने अमेरिकी मीडिया को फेक न्यूज करार दिया और सीधे जनता के साथ संवाद करने के लिए सोशल मीडिया का बड़े पैमाने पर उपयोग किया। ट्रम्प ने यह दावा किया कि वे अमेरिकी लोगों के असली हितों के प्रतिनिधि हैं और अभिजात वर्ग (एलीट) जनता के खिलाफ कार्य कर रहा है। इससे अमेरिका की न्यायपालिका और चुनावी प्रक्रियाओं की निष्पक्षता और स्वतंत्रता पर सवाल उठने लगे, और 2016 के चुनावों से पहले ही लोकतांत्रिक संस्थाओं की वैधता पर बहस छिड़ गई थी ।

ब्राजील में लोकलुभावनवाद का उदाहरण

ब्राजील में लोकलुभावनवाद का एक प्रमुख उदाहरण 1990 के दशक के अंत और 2000 के दशक की शुरुआत में देखा गया, जब देश में आर्थिक संकट, असमानता, और भ्रष्टाचार के मुद्दों ने जोर पकड़ा। 2003 में लुइज़ इनासियो लूला दा सिल्वा के राष्ट्रपति बनने के बाद ब्राजील में लोकलुभावनवाद के तत्व सामने आए, हालाँकि लूला खुद एक लोकलुभावनवादी नेता नहीं थे। इसके बावजूद, उनके शासन के दौरान सामाजिक कार्यक्रमों और आर्थिक सुधारों ने बड़े पैमाने पर जनता का समर्थन जुटाया।

हालाँकि, 2000 के दशक के मध्य तक, ब्राजील की राजनीति में भ्रष्टाचार और राजनीतिक अस्थिरता का दौर शुरू हुआ। इसके परिणामस्वरूप, 2010 के दशक में ब्राजील में लोकलुभावनवादी नेताओं का उभार देखा गया, जो पारंपरिक राजनीतिक संस्थाओं पर हमला कर रहे थे। इन नेताओं ने न्यायपालिका, मीडिया, और अन्य स्वतंत्र संस्थानों को दोषी ठहराया और जनता के सामने खुद को एकमात्र सही विकल्प के रूप में प्रस्तुत किया। इस प्रकार, ब्राजील में लोकतांत्रिक संस्थाओं की वैधता और स्वतंत्रता पर सवाल उठाए जाने लगे (Mudde-2004)।

भारत में लोकलुभावनवाद का उदाहरण

भारत में लोकलुभावनवाद की जड़ें लंबे समय से देखी जा सकती हैं, जहाँ विभिन्न लोकलुभावनवादी आंदोलनों ने राजनीति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। भारतीय राजनीति में लोकलुभावनवादी नेताओं ने अक्सर पारंपरिक अभिजात वर्ग और राजनीतिक संस्थाओं की आलोचना की है और खुद को जनता के सच्चे प्रतिनिधि के रूप में प्रस्तुत किया है। 1990 के दशक में भारत में मंडल आयोग की सिफारिशों के बाद जाति आधारित राजनीति और क्षेत्रीय दलों का उभार लोकलुभावनवाद का प्रमुख उदाहरण है। इन आंदोलनों ने पारंपरिक राजनीतिक संस्थाओं को चुनौती दी और अभिजात वर्ग के खिलाफ नारों का सहारा लिया।

2000 के दशक की शुरुआत में, गुजरात के तत्कालीन मुख्यमंत्री नरेंद्र मोदी ने खुद को एक लोकलुभावनवादी नेता के रूप में प्रस्तुत किया, जो अभिजात वर्ग के खिलाफ खड़ा था। 2014 के भारतीय आम चुनाव से पहले मोदी ने विकास और राष्ट्रवाद के नारों का उपयोग करके बड़े पैमाने पर समर्थन जुटाया। मोदी ने कांग्रेस पार्टी जैसी पारंपरिक राजनीतिक संस्थाओं की आलोचना की

और दावा किया कि वे जनता के हितों के खिलाफ काम कर रही हैं। इसके साथ ही, उन्होंने भ्रष्टाचार और अनियमितताओं को मुख्य मुद्दा बनाकर अपने अभियान को आगे बढ़ाया। इस तरह से मोदी के नेतृत्व में भारतीय राजनीति में एक मजबूत लोकलुभावनवादी लहर देखने को मिली, जिसने चुनावी प्रक्रियाओं और राजनीतिक संस्थाओं पर गहरा प्रभाव डाला ।

लोकलुभावनवाद का भारतीय राजनीति में एक और उदाहरण विभिन्न क्षेत्रीय दलों के उभार में देखा जा सकता है, जैसे कि पश्चिम बंगाल में तृणमूल कांग्रेस और दिल्ली में आम आदमी पार्टी। इन दलों ने भ्रष्टाचार और अभिजात वर्ग के खिलाफ अपने अभियानों को केंद्र में रखा और खुद को जननेता के रूप में प्रस्तुत किया। इन दलों ने भी पारंपरिक राजनीतिक संस्थाओं को चुनौती दी और चुनावी प्रक्रियाओं में लोकलुभावनवादी तत्वों को बढ़ावा दिया।

6. लोकलुभावनवाद के दीर्घकालिक प्रभाव

लोकलुभावनवाद के प्रभाव को केवल अल्पकालिक चुनावी लाभों तक सीमित नहीं किया जा सकता, बल्कि इसके दीर्घकालिक प्रभाव समाज, राजनीतिक संस्थाओं और शासन प्रणाली पर गहरे और स्थायी हो सकते हैं। लोकलुभावनवादी आंदोलनों के दीर्घकालिक परिणामों को कई स्तरों पर देखा जा सकता है, जिनमें प्रमुख रूप से संस्थाओं की स्थिरता में कमी, समाज में ध्रुवीकरण, और राजनीतिक अस्थिरता और अनिश्चितता का उभरना शामिल है।

संस्थाओं में स्थिरता की कमी

लोकलुभावनवादी नेताओं का एक प्रमुख लक्ष्य लोकतांत्रिक संस्थाओं, जैसे न्यायपालिका, संसद, और मीडिया, की स्वतंत्रता और निष्पक्षता पर हमला करना होता है। इस प्रक्रिया में, वे इन संस्थाओं की वैधता और विश्वसनीयता को कमजोर कर देते हैं। लोकलुभावनवादी नेता अक्सर इन संस्थाओं को जनता के खिलाफ कार्य करने वाली संस्थाओं के रूप में चित्रित करते हैं, जिससे जनता का इन पर विश्वास कमजोर होता है। इस प्रकार, दीर्घकाल में इन संस्थाओं की स्थिरता और उनकी क्षमता पर सवाल खड़े हो जाते हैं। न्यायपालिका और मीडिया जैसे स्वतंत्र संस्थानों को जब बार–बार निशाना बनाया जाता है, तो यह संस्थाएँ अपने मूल कार्यों में कमजोर हो जाती हैं, जिससे लोकतंत्र की आधारशिला हिलने लगती है।

मुद्दे की गंभीरता तब बढ़ जाती है जब लोकलुभावनवादी नेता संस्थानों के कामकाज में हस्तक्षेप करने के लिए अपने समर्थकों का उपयोग करते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि जनता संस्थागत प्रक्रियाओं और फैसलों पर अविश्वास करने लगती है। जैसे–जैसे संस्थाओं की विश्वसनीयता घटती है, लोकतंत्र के आधार कमजोर होते जाते हैं और राजनीतिक प्रक्रियाओं की वैधता पर सवाल उठाए जाते हैं (Canovan- 1999)।

ध्रुवीकरण

लोकलुभावनवादी आंदोलनों का एक और दीर्घकालिक प्रभाव समाज में विभाजन और ध्रुवीकरण का बढ़ना है। लोकलुभावनवादी नेता अक्सर हम बनाम वे का दृष्टिकोण अपनाते हैं, जिसमें वे खुद को जनता के असली प्रतिनिधि के रूप में प्रस्तुत करते हैं और अभिजात वर्ग को दोषी ठहराते हैं। इस

प्रक्रिया में, वे समाज को विभिन्न समूहों में विभाजित करते हैं और एक गहरी सामाजिक खाई पैदा करते हैं। यह विभाजन दीर्घकाल में सामाजिक स्थिरता को प्रभावित करता है और विभिन्न सामाजिक समूहों के बीच संघर्ष और अविश्वास को बढ़ाता है।

लोकलुभावनवादी नेता अपनी राजनीति को सरल और ध्रुवीकरणकारी नारों के माध्यम से आगे बढ़ाते हैं, जो मतदाताओं को भावनात्मक रूप से प्रभावित करते हैं। इससे समाज में गहरी असहमति और विभाजन पैदा होते हैं। इस ध्रुवीकरण का परिणाम यह होता है कि लोकतांत्रिक संवाद और सहमति की गुंजाइश घटती जाती है और राजनीतिक दलों के बीच सहयोग की संभावना समाप्त हो जाती है। जैसे–जैसे समाज में ध्रुवीकरण बढ़ता है, दीर्घकाल में यह सामाजिक और राजनीतिक स्थिरता को कमजोर कर देता है (Mudde- 2004)।

अस्थिरता और अनिश्चितता

लोकलुभावनवाद का दीर्घकालिक प्रभाव राजनीतिक अस्थिरता और अनिश्चितता के रूप में देखा जा सकता है। लोकलुभावनवादी नेता अक्सर संस्थागत प्रक्रियाओं की अवहेलना करते हुए सत्ता में बने रहने के लिए हर संभव प्रयास करते हैं। वे नियमों और नीतियों में बदलाव करके या संस्थानों को कमजोर करके अपनी सत्ता को मजबूत करने की कोशिश करते हैं। इससे शासन प्रणाली में अस्थिरता और अविश्वास का माहौल बनता है।

लोकलुभावनवादी नीतियों का लक्ष्य अल्पकालिक चुनावी सफलता होता है, जबकि दीर्घकालिक शासन की स्थिरता और लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं की सुरक्षा की बलि दी जाती है। जब संस्थाओं की स्वायत्तता और पारदर्शिता को कम कर दिया जाता है, तो शासन प्रणाली कमजोर हो जाती है और राजनीतिक अस्थिरता की स्थिति उत्पन्न होती है। इसका परिणाम यह होता है कि देश में अविश्वास का वातावरण पनपने लगता है, और शासन की क्षमता और प्रभावशीलता पर सवाल उठने लगते हैं (Schedler- 1999)।

7. निष्कर्ष

लोकलुभावनवाद का लोकतांत्रिक संस्थाओं पर प्रभाव अत्यंत गहरा और व्यापक होता है। यह संस्थाओं की स्वतंत्रता, निष्पक्षता और उनकी विश्वसनीयता को कमजोर कर सकता है, जिससे लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं की स्थिरता पर खतरा मंडराने लगता है। लोकलुभावनवादी नेता अपने नीतिगत उद्देश्यों को पूरा करने के लिए न्यायपालिका, मीडिया, और चुनावी संस्थाओं जैसी स्वतंत्र संस्थाओं पर हमला करते हैं, जिससे इनकी विश्वसनीयता घटती है और लोकतंत्र कमजोर होता है।

लोकलुभावनवादी आंदोलनों का वैश्विक उदय हमें यह समझने में मदद करता है कि किस प्रकार लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं में असंतुलन पैदा होता है और दीर्घकाल में इनका समाज पर नकारात्मक प्रभाव पड़ सकता है। यह आवश्यक है कि लोकतांत्रिक व्यवस्थाएँ लोकलुभावनवाद के खतरों का सामना करने के लिए अपनी संस्थाओं को मजबूत करें और जनता को सही, निष्पक्ष और पारदर्शी जानकारी प्रदान करें। इसके बिना, लोकतंत्र की दीर्घकालिक स्थिरता को बनाए रखना कठिन हो

जाएगा। लोकतांत्रिक संस्थाओं की रक्षा और उन्हें मजबूत बनाए रखना प्रत्येक लोकतांत्रिक समाज की प्राथमिक जिम्मेदारी होनी चाहिए ताकि लोकलुभावनवाद के खतरों से बचा जा सके।

संदर्भ –

1. मुद, सी. (2004). द पॉपुलिस्ट ज़ीटजिस्ट. गवर्नमेंट एंड ऑपोजिशन, 39(4), 541–563.
2. कनॉवन, एम. (1999). जनता पर विश्वास करो! लोकलुभावनवाद और लोकतंत्र के दो चेहरे. पॉलिटिकल स्टडीज, 47(1), 2–16.
3. जाफरालोट, सी. (2003). भारत की मूक क्रांति उत्तर भारत में निचली जातियों का उदय. सी. हर्स्ट एंड कंपनी.
4. मेनी, वाई., और सुरेल, वाई. (2002). लोकतंत्र और लोकलुभावन चुनौती. पल्पग्रेव मैकमिलन.
5. शेडलर, ए. (1999). आत्म–नियंत्रित राज्य नई लोकतांत्रिक प्रणालियों में शक्ति और जवाबदेही. लिन रेनेर पब्लिशर्स.
6. जगर्स, जे., और वालग्रेव, एस. (2007). लोकलुभावनवाद राजनीतिक संचार शैली के रूप मेंरू बेल्जियम में राजनीतिक दलों के भाषणों का एक अनुभवजन्य अध्ययन. यूरोपीय राजनीतिक अनुसंधान पत्रिका, 46(3), 319–345.
7. लैकलाऊ, ई. (2005). पॉपुलिस्ट रीज़न पर. वर्सो.
8. ऑडियो संदर्भरू रेडियो इंडिया (1998). भारतीय राजनीति में लोकलुभावनवाद का उदय. ख्ऑडियो फ़ाइल,. ऑल इंडिया रेडियो आर्काइव्स.
9. वीडियो संदर्भरू दूरदर्शन (2004). भारत में लोकलुभावन राजनीतिरू एक विश्लेषण. ख्वीडियो फ़ाइल,. नेशनल टेलीविज़न नेटवर्क.
10. मैगज़ीन संदर्भ कुमार, एस. (2003, मार्च). भारतीय लोकतंत्र में लोकलुभावनवादरू एक उभरता खतरा. इंडिया टुडे, 28(3), 45–49.
11. समाचार पत्र संदर्भ सिंह, ए. (2002, अप्रैल 14). लोकलुभावनवादी राजनीति और लोकतंत्र का संकट. द हिंदू, पृ. 5.